Rajasthan Journal of Sociology

ISSN 2249-9334

Volume 9 October 2017

Bilingual Journal of Rajasthan Sociological Association

Rajasthan Sociological Association

(Regd. No. 216/1973-74)

R.S.A. Website: www.rsaraj.org

Registered Office: Department of Sociology, University of Rajasthan, Jaipur.

Office Bearers

President: S. L. Sharma (Jaipur)

Vice President: Aruna Bhargava (Jaipur)

Vice President: Susheel Tyagi (Jhunjhunu)

Secretary: Ashutosh Vyas (Chittorgarh)

Joint Secretary: Anju Beniwal (Udaipur)

Treasurer: Mahesh Nawaria (Jaipur)

Executive Members

Tribhu Nath Dubey (Kota), Gaurav Gothwal (Jaipur), Subodh Kumar (Sawai Madhopur), Lalit Kumawat (Udaipur), Deepa Mathur (Jaipur), Manee Ram Meena (Nathdwara), Meenakshi Meena (Jodhpur), Monika Rao (Jaipur), Prakash Sharma (Sawai Madhopur), Sumitra Sharma (Udaipur), Sudesh Tyagi (Jhunjhunu)

Editorial Board

Chief Editor : Naresh Kumar Bhargava

Co-Editors: Mridula Trivedi, Tribhu Nath Dubey

Assistant Editors : Mridula Bairwa, Shruti Tandon, Manoj Rajguru

Managerial Assistance : Lalit Kumawat,

Editorial Advisory Committee

Mohan Advani (Udaipur), Aruna Bhargava (Jaipur), Rajeev Gupta (Jaipur), S.P. Gupta (Jodhpur), Shyam Lal Jaidia (Jaipur), Gunjeet Kaur (New Delhi), Sanjay Lodha (Udaipur), Indu Mathur (Jaipur), B.K. Nagla (Rohtak), Monika Nagori (Udaipur), S.C. Rajora (Chittorgarh), C.L. Sharma (Udaipur), K.L. Sharma (Jaipur), S.L. Sharma (Jaipur), Madhusudan Trivedi (Udaipur), Ashutosh Vyas (Chittorgarh).

Rajasthan Journal of Sociology is a refereed Journal of Rajasthan Sociological Association. It is an annual publication, published in October every year.

All rights are reserved except for brief quotations in scholarly works. No part of Journal may be produced without permission of Rajasthan Sociological Association.

As per Rajasthan Sociological Association Constitution, all registered member are entitled to receive a free copy of the journal.

Subscription rates: Individual Rs. 150, Institutional Rs. 350.

मलिन बस्ती निवासियों के प्रतिदिन के जीवन की बदलती शैली 116
लोकेश जैन

भूमि हस्तांतरण एवं जाति-वर्ग संबंध 122
भागीलाल जणवा

संस्कृतीकरण की अवधारणा: एक विश्लेषण 129
रिषपाल मीना

जनजाति क्षेत्रों में भोपा: एक अवधारणात्मक परीक्षण 134
राजू सिंह

कालबेलिया नृजातीय समुदाय और विकास की धाराएं 139
तुलसीराम नागर

सूचना और संचार प्रौद्योगिकी द्वारा ग्रामीण महिलाओं में राजनीतिक जागरूकता 143
चंचल रानी सहारन

ग्रामीण व नगरीय क्षेत्रों में सामाजिक व्यवस्था एवं परिवर्तन 148
गोपाल लाल चौधरी

आधुनिकता और सामाजिक विचलन 153
पूनम शर्मा

Book Reviews

Imbalanced Sex Ratio: A Socio-Cultural and Demographic Understanding of the Problem **: Anant Sharma** 158
Amithy Jasrotia

Politics of the Untouchables**: Shyam Lal** 159
Naresh Bhargava

Muslim Women in Political Process in India**: Zenab Banu** 160
Shivam

The Indian Middle Class**: Surinder S. Jodhka and Aseem Prakash,** 162
C.L. Sharma

Refashioning India: Gender, Media and Transformed Public Discourse: **Maitrayee Chaudhuri** 163
Supriya Seth

आदिवासी प्राधिकार संरचना : **श्याम एस. कुमावत** 165
मोनिका नागौरी

अनुसूचित जनजातियों में सामाजिक परिवर्तन : **रिषपाल मीना** 166
अन्जु बनीवाल

महिला सशक्तीकरण चुनौतियां और संभावनाएं : **आशुतोष व्यास** 167
महेश नावरिया

Rajasthan Sociological Association acknowledges with thanks the Indian Council of Social Science Research, New Delhi for providing publication grant for this journal.

जनजाति क्षेत्रों में भोपा: एक अवधारणात्मक परीक्षण

Rajasthan Journal of Sociology
2017, Vol. 9

राजू सिंह

सार: आधुनिक युग में भी विकसित चिकित्सा पद्धतियों के साथ ही लोग पारम्परिक चिकित्सा पद्धतियों से भी रोगों का उपचार करवाते हैं। इसी कारण भारतीय जनजाति एवं गैर–जनजाति समाजों में पारंपरिक तरीके से चिकित्सा करने वाले भोपाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान है। जनजातीय क्षेत्रों में भोपाओं के क्रियाकलापों द्वारा लोग अब भी प्रभावित हैं। भोपाओं का संस्कृति के संबंध में विशिष्ट स्थान है। भोपा लोगों की समस्याओं का समाधान भी करता है और बीमारियों का उपचार भी करता है। लोग भोपा के प्रति समर्पित रहते हैं। आधुनिक शिक्षा भी इनके प्रति विश्वास को नहीं तोड़ पाई है। प्रस्तुत लेख में जनजाति समाज में व्याप्त परम्पराओं के अवधारणात्मक संदर्भों को विश्लेषित किया गया है।

संकेत शब्द: भोपा, ग्रामीण समाज, जनजाति, दैवीय–शक्ति, लघु संस्कृति, कर्मकाण्ड

मानव, संसार की समस्त घटनाओं या सृष्टि के रहस्यों को नहीं समझ पाता है। अपने जीवन में प्रतिदिन के अनुभवों से वह यह सीखता है कि अनेक ऐसी घटनाएं हैं जिन पर उसका कोई नियन्त्रण नहीं है। सम्भवतः इस कारण ही उसमें यह धारणा पनपती है कि कोई एक ऐसी भी शक्ति है जो कि दिखाई नहीं देती परन्तु वह किसी भी मनुष्य से कहीं अधिक शक्तिशाली है। मनुष्य की इस अज्ञात शक्ति को जानने की लालसा अति प्राचीन काल से रही है। उसने इन अतिमानवीय शक्तियों को नियन्त्रित करने व उन पर विजय पाने का प्रयत्न भी किया। जब वह अपनी असमर्थता स्वीकार कर उन पर नियन्त्रण पाने के बजाय उनसे नियन्त्रित होने लगा और उनके प्रति समर्पण करने लगा तो धर्म और दैवीय शक्तियों का जन्म हुआ। यह शक्ति अलौकिक दैवीय शक्ति है, इसे डरा–धमका कर या ऐसे अन्य किसी उपाय से अपने वश में नहीं किया जा सकता है। इस शक्ति को अपने पक्ष में लाने का एकमात्र उपाय इसके सम्मुख सिर झुकाकर पूजा, प्रार्थना या आराधना करना है।

पारम्परिक समाजों की अपनी विशेषताएं हैं। भारत इसका अपवाद नहीं है। परम्परा का अर्थ मूल रूप में उन विश्वासों और कार्यकलापों से हैं जिनका ऐतिहासिक आधार है और जिन पर विश्वास किया जाता रहा है। परम्पराएं प्रायः समाज की आदि संरचनाओं से जुड़ी रहती हैं और बहुत से विश्वासों, प्रतीकों तथा आधारों को सुरक्षित रखती हैं। किन्ही अर्थों में ये प्रेरणादायक भी हैं और संकुचित क्रियाधाराओं की पोषक भी।

धार्मिक परम्पराएं

धर्म के सम्बन्ध में परम्पराएं अपनी भूमिकाएं भिन्नता से निभाती हैं। सम्भवतः परम्परा के बहुत से आधार धार्मिक विश्वासों और आधारों के साथ जुड़े हुए रहते हैं। मिल्टन सिंगर (1975) ने अपने लेख में दो प्रकार की परम्पराओं का उल्लेख किया है – दीर्घ परम्पराएं, जो वृहत् स्तर पर मान्य और विश्वसनीय है तथा लघु परम्पराएं, जो स्थानीय स्तर पर मान्य हैं या जिनका विश्वास किन्हीं विशेष जाति वर्ग तक सीमित है और अपने कलेवर में सीमित है। देश के विभिन्न प्रदेश इस मान्यताओं से अलग नहीं हैं। राजस्थान भी इसका अपवाद नहीं है (चूण्डावत,1994)। नृजातीय वर्जनाओं के आधार पर राजस्थान में बहुत से नृजातीय समूह हैं, जो पारम्परिक आधारों की संस्कृतियों के साथ जुड़े हुए हैं। लघु परम्पराओं के ये पुजारी वृहत् परम्परा जैसी जातीय संरचनाओं के साथ जुड़े हुए नहीं हैं। इस लेख का विषय भी इस प्रकार के नृजातीय समूहों के साथ जुड़ा हुआ है।

राजस्थान के गांवों में वर्तमान में भी लोग देवी–देवताओं की उपासना करते हैं एवं विभिन्न समस्याओं के समाधान के लिये भोपाओं की शरण में जाते हैं। प्रत्येक धर्म का आधार किसी शक्ति पर

विश्वास है और यह शक्ति मानव–शक्ति से अवश्य ही श्रेष्ठ है। साथ ही उस शक्ति के प्रति श्रद्धा भक्ति या प्रेमभाव भी धर्म का आवश्यक अंग है। कहीं–कहीं पर उस दैवीय शक्ति को साकार रूप में पूजा जाता है। इस अलौकिक शक्ति से सम्बन्धित समस्त विश्वासों, भावनाओं और क्रियाओं के सम्मिलित रूप को दैवीय शक्ति कहा गया है। दैवीय शक्ति से लाभ उठाने के लिए और उसके कोप भाजन से बचने के लिए प्रार्थना, पूजा या आराधना करने की विधियां या संस्कार किए जाते हैं। अतः कष्ट की स्थिति में मनुष्य कुछ इस प्रकार की शक्तियों एवं प्रणालियों की सहायता लेता है, जो उसकी शक्ति से श्रेष्ठ है, समाज और प्रकृति से परे और पारलौकिक है। क्रिया के दौरान धर्म और जादू का जन्म होता है और इस क्रिया को सम्पन्न करने का कार्य भोपा या ओझा करता है।

जिस प्रकार आदिम तरीके से लोगों की बीमारियों का इलाज किया जाता है और रोग विशेषज्ञों द्वारा बीमारियों का पता लगा कर उसका इलाज किया जाता है, उसी प्रकार भोपा भी विभिन्न तरीकों से बीमारियों का निदान करने के कई तरीकों को अपनाते हैं। लोगों की बीमारियों से राहत पाने के सरलीकृत तरीके अपनाए जाते हैं। लोग जितना डॉक्टर पर विश्वास करते हैं उसने कहीं अधिक विश्वास भोपाओं पर भी करते हैं (लेडरमैन और रोजमेन, 2016)।

अवधारणात्मक पृष्ठभूमि

ग्रामीण और जनजाति समाज में प्रचलित परंपराओं में भोपाओं का स्थान महत्त्वपूर्ण है। समाज विज्ञानों में भोपाओं से सम्बन्धित बहुत कम अध्ययन हुए हैं। उच्चकोटि के समाज वैज्ञानिकों और मानवशास्त्रियों ने इस क्षेत्र में बहुत कम शोध किया है। अधिकांश विद्वानों ने अपना मूल कार्य धर्म और जादू से प्रारम्भ किया। जनजाति समाजों में मानवशास्त्रियों ने अपने अध्ययनों में परिचारात्मक व्यक्तियों के अध्ययन किए हैं। जनजाति और ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसे व्यक्ति विशिष्ट हैं। तंत्र–मंत्र, चिकित्सा तथा आत्माओं के साथ संपर्क तथा विभिन्न भविष्यवाणियां करना इन व्यक्तियों की विशेषताएं हैं। लेकिन प्रश्न यही उठता है कि अवधारणात्मक आधार पर ऐसे व्यक्तियों का विश्लेषण कैसे किया जा सकता है ? किसी भी व्यावहारिक अध्ययन से पहले उन अवधारणाओं का अध्ययन आवश्यक है, जो इस संबंध में रची गई हैं। किसी विश्लेषण से पहले इन अवधारणाओं की एक समीक्षा प्रस्तुत की जा सकती हैं।

सोमानी (1998) का कहना है कि भोपा बहुमुखी, बहुकारकीय संस्था हैं। वह फड़ गायक है, लघु परम्पराओं के देवी–देवताओं का वाहक है और कहीं–कहीं पर चिकित्सकीय भी है। इसलिए प्रायः सभी मौलिक समाजों में इससे संबन्धित अवधारणाओं को कैसे देखा गया है, पहले इसकी ही समीक्षा करना स्वभाविक है।

हयूट्सन (2000) का विचार है कि आधुनिक समय में भी आध्यात्मिक रूप से बीमारियों के उपचार पर एक अतिमानवीय शक्ति पर लोंगों का विश्वास बहुत सुदृढ़ है। व्यक्ति अपने दैनिक जीवन में अधिक परिश्रम के पश्चात् चिन्ता और तनाव से मुक्त स्वस्थ जीवन चाहता है। इसलिए जब उसको कोई कठिनाई या स्वास्थ्य की समस्या आती है तब वह आध्यात्मिक व्यक्ति, जो दैवीय शक्ति युक्त है, की शरण में जाता है और उससे सहायता मांगता है। वहीं आधुनिक पश्चिमी उप–संस्कृतियों में व्यक्तियों के अत्यधिक सुख की कामना अलौकिक शक्ति के माध्यम से की गई है। हसनैन (2016) ने सामाजिक मानवशास्त्र के सन्दर्भ में विश्वास की व्याख्या की है। भारत की किसी भी जनजाति के साथ उसका पारिस्थितिकीय सम्वन्ध घनिष्ठ है। उसके बिना प्रकृति और जनजाति की तुलना नहीं की जा सकती है।

मानव की प्रकृति धर्म, जादू , विज्ञान, मिथकों और कला के सन्दर्भ में प्रकार्यात्मक परिप्रेक्ष्य क्या है? इस संदर्भ में मानवीय संस्कृति की विस्तृत विवेचना के अनुसार ये व्यक्ति मानव और समाज के साधन हैं। इन पर मनुष्य निर्भर है और अपने सभी कार्य सम्पन्न करता है। व्यक्ति जादुई कार्य तार्किकता के बिना और पूर्ण ज्ञान के सम्पन्न नहीं कर सकता (उपाध्याय और पाण्डे, 1993)।

परम्परागत चिकित्सा

यह कहा गया है कि युगाण्डा की बुलामोगी जनजाति के लोग पारम्पारिक चिकित्सा पद्धतियों को रोगों के उपचार में आधुनिक चिकित्सा पद्धतियों की तुलना में बहुत उपयोगी मानते हैं, जबकि इस जनजाति के अलावा दूसरी जनजातियों के लोग आधुनिक चिकित्सा पद्धति को महत्त्वपूर्ण मानते हैं। वहां के स्थानीय निवासियों को आधुनिक चिकित्सा पद्धति की सही जानकारी नहीं हैं वे रोगों के उपचार में पारम्परिक चिकित्सा पद्धति को ही श्रेष्ठ मानते हैं। ये दोनों पद्धतियां अपनी– अपनी जगह भिन्न हैं। लेकिन दोनों ही कितने ही लोगों की बीमारियों में सहायता करती है (ताबुती और ढिल्लों, 2003)।

न्यूजीलैण्ड की माओरी जनजाति में स्वदेशी तरीकों से उपचार करने वाले लोगों का अधिक महत्त्व है। वे जैवप्राकृत चिकित्सा से बीमारियों का इलाज करते हैं। माओरी लोग आध्यात्मिक तरीके से भी इलाज करते हैं। आध्यात्मिक पवित्रता के आधार पर लोग स्वस्थ रहते हैं। यह कहा गया है आध्यात्मिकता का माओरी लोगों के मस्तिष्क, शरीर, आत्मा, और उपचार करने वालों पर बहुत प्रभाव दिखाई देता है। पांच अवधारणाएं आपस में अन्तर्सम्बधित हैं–मस्तिष्क, शरीर, आत्मा, परिवार और पवित्रता की अवधारणा। आध्यात्मिकता और स्वदेशी उपचार के तरीकों से माओरी लोग स्वस्थ जीवन जीते हैं (ताबेथा, ग्लेनिस, लवन्स और एण्टोनिया, 2010)।

लोग विभिन्न प्रकार के रोगों और मानसिक शान्ति की प्राप्ति के लिए पारम्परिक चिकित्सा पद्धतियों को, जो हमारी पारम्परिक संस्कृति में विद्यमान हैं, अपनाते हैं। समाज में कई प्रकार के रोगों के ईलाज की पद्धत्तियां विद्यमान हैं, लोग इन्हें अपनाते हैं और इनको उपयोग में लाने वाले पारम्परिक पद्धत्तियों से इलाज करने वालों के पास अधिक जाते हैं। इसमें मुख्यतः, गुरू, ओझा, तान्त्रिक, पुजारी, विश्वास पात्र पारम्पारिक भोपा आदि हैं, जो पारम्परिक पद्धतियों से सामाजिक और वैयत्तिक समस्याओं का समाधान करते हैं। सामाजिक–सांस्कृतिक विश्वासों की समाज में एक व्यवस्था होती हैं जिसके इर्द–गिर्द लोगों की जीवन पद्धतियां चलती हैं। लोग भी इसी का सहारा लेकर चलते हैं और अपना जीवन बिताते हैं (दलाल, 2007)।

पवित्रता एवं अपवित्रता के आयाम

धर्म, पवित्रता एवं अपवित्रता में भेद करता है। जो चीजें धर्म से सम्बन्धित होती हैं, वे सदैव पवित्र मानी जाती हैं। यही कारण है कि हम मूर्ति, मन्दिर, कर्म–काण्ड, की वस्तुओं एवं पूजा–पाठ को पवित्र मानते हैं। धर्म का सम्बन्ध हमारी भावनाओं एवं संवेगों से भी है। यह अलौकिक शक्ति में विश्वास, भय, श्रद्धा, भक्ति, आदर एवं प्रेम की भावनाओं तथा संवेगों से जुड़ा होता है। हम अलौकिक शक्ति से डरते हैं अतः उससे प्रेम भी करते हैं। इस प्रकार धर्म में भय मिश्रित श्रद्वा होती है। हम जानते हैं कि अलौकिक शक्ति प्रसन्न होने पर हमारा भला कर सकती है और नाराज होने पर हमें नष्ट कर सकती है। प्रत्येक धर्म में अलौकिक शक्ति को प्रसन्न करने एवं उसके कोप से बचने के लिये प्रार्थना, पूजा एवं आराधना की जाती है। इसके लिये अनेक विधियां प्रचलित हैं। हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, बौद्ध, और जनजातीय लोग अपने–अपने तरीकों से प्रार्थना, पूजा एवं आराधना करते हैं। अलौकिक शक्ति तर्क–वितर्क एवं वैज्ञानिक तथ्यों से परे होती है। यह भावना एवं विश्वास पर आधारित है। विज्ञान के आधार पर अलौकिक या दैवीय शक्ति को सिद्ध या असिद्ध नहीं किया जा सकता। अलौकिक शक्ति का वास्तविक आधार तो स्वयं समाज है, इसलिये दुर्खाइम लिखते हैं कि स्वर्ग का साम्राज्य एक महिमामण्डित समाज है। अलौकिक शक्ति में विश्वास एवं अनुष्ठान सम्मिलित है। प्रत्येक धर्म का अपना एक पवित्र टोटम होता है। जो अलौकिक शक्ति से युक्त होता है। टोटमवाद नैतिक कर्तव्यों और मौलिक विश्वासों का वह समूह है जिनके द्वारा समाज पशु, पौधों तथा अन्य प्राकृतिक वस्तुओं के बीच

एक पवित्र और अलौकिक सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। जनजातीय लोग यह मानते हैं कि टोटम में अलौकिक शक्ति का निवास है जो उनके सामाजिक जीवन को नियन्त्रित करती है (दुर्खाइम, 1915)।

फ्रेजर (1955) का कहना है कि धर्म की प्रकृति और भी निश्चित है। धर्म से तात्पर्य मनुष्य से श्रेष्ठ उन शक्तियों की सन्तुष्टि या आराधना से है, जिनके सम्बन्ध में यह विश्वास किया जाता है कि वे प्रकृति और मानव–जीवन को मार्ग दिखलाती हैं और नियन्त्रित करती है ।

टायलर वे पहले विद्वान् थे जिन्होने यह बताया कि आदिम जातियों में भी धार्मिक क्रियाएं एवं विधि–विधान पाए जाते हैं। इससे पूर्व धर्म केवल सभ्य जगत की उपज ही समझा जाता रहा। टायलर के बाद किसी भी मानवशास्त्री ने किसी भी ऐसी जनजाति का उल्लेख नहीं किया है जो धर्मरहित हो। मानव अपने धार्मिक विश्वास विभिन्न धार्मिक क्रियाओं, जैसे, पूजा–पाठ, कर्मकाण्ड, यज्ञ, हवन एवं बलि आदि के द्वारा अभिव्यक्ति करता है। यही कारण है कि प्रत्येक धर्म में अलौकिक शक्ति से सम्बन्धित बाह्य क्रियाएं पाई जाती हैं। कुछ धार्मिक क्रियाएं तो ऐसी होती है जिन्हे सामान्यतः सभी व्यक्ति कर सकते हैं किन्तु कुछ के लिये धार्मिक विशेषज्ञों जैसे– पण्डे, पुजारी, मुल्ला, भोपा आदि का सहयोग लिया जाता है (टायलर, 1920)।

आधुनिक समय में मानव ने विज्ञान के सहारे अपने पर्यावरण पर कई प्रकार से नियन्त्रण प्राप्त करने के कई प्रयत्न किए हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि कई समाज तो धर्म–निरपेक्ष हो गए हैं, धर्म में रुचि नहीं रखते न ही भोपा एवं ओझा को मानते हैं। फिर भी धर्म आज एक सार्वभौम तथ्य बना हुआ है। आदिम जातियों ग्रामीणों एवं लघु समाजों में आज भी यह मान्यता हैं कि मानव प्रयत्नों की सफलता–असफलता ऐसी दैवीय–शक्तियों के हाथ में है जो घटनाक्रम को परिवर्तित कर सकती हैं। आदिम एवं गैर–जनजाति समाजों और यहां तक कि शहरी समाजों में भी प्राकृतिक एवं ईश्वरीय शक्ति में अन्तर नहीं किया जाता है और सभी घटनाओं के पीछे अलौकिक शक्ति का हाथ समझा जाता है। उनके जीवन की अधिकांश घटनाएं एवं क्रियाएं धार्मिक और जादुई क्रियाओं से प्रारम्भ होती हैं। उनका अलौकिक शक्ति में विश्वास विज्ञान की चमत्कारी देन के बावजूद भी आज भी वैसा ही बना हुआ है, जैसा पहले था ।

निष्कर्ष

उपर्युक्त अवधारणात्मक विचारों का विश्लेषण किया जाए तो कहा जा सकता है कि जादू–टोना, दैवीय शक्तियों पर विश्वास सामान्यतः सभी समाजों में विद्यमान हैं। यूरोपीय लोग सामान्यतः धर्म–निरपेक्ष हैं, उसी तरह भारतीय लोग मूल रूप में धार्मिक हैं। वर्तमान में तार्किकता और वैज्ञानिकता के प्रभाव में वृद्धि हो रही है। इसके उपरान्त भी यह कहा जा सकता है कि धर्म का प्रभाव ग्रामीण और नगरीय जीवन से पूर्णतया लुप्त नहीं हो सकता। मानव अपने धार्मिक विश्वास, विभिन्न धार्मिक क्रियाओं जैसे पूजा–पाठ, कर्मकाण्ड, यज्ञ, हवन एवं बलि आदि के द्वारा अभिव्यक्त करता है यही कारण है कि प्रत्येक धर्म में दैवीय शक्ति से संबंधित बाह्य क्रियाएं पाई जाती हैं। कुछ धार्मिक क्रियाएं तो ऐसी होती हैं, जिन्हें सामान्यतः सभी व्यक्ति कर सकते हैं किन्तु कुछ के लिए धार्मिक विशेषज्ञों का सहयोग लिया जाता है। भोपाओं के पास कंई बीमारियों सें पीड़ित व्यक्ति आते हैं, जिन्हे स्वस्थ करने के लिए इनके द्वारा कई प्रकार की इलाज की पद्धतियां काम में ली जाती हैं। इनके द्वारा लोग कई बार स्वस्थ भी होते है क्योंकि इनका दैवीय शक्तियों में गहन विश्वास होता है। देवी–देवता का जहां स्थान होता है, उस स्थान से लोगों की गहन आस्था होती है। दैवीय शक्ति में आस्था के कारण उन स्थानों पर लोग इसलिए आते हैं कि उनकी समस्याओं का समाधान हो सके। कोढ़ से पीड़ित व्यक्ति, बीमार, दर्द से पीड़ित, लकवा, शारीरिक बीमारियां आदि से पीड़ित लोग इन देवी–देवताओं के देवरों और भोपाओं के पास आते

हैं। भोपा इनका इलाज कई प्रकार की पद्धतियों से करते हैं।

राजस्थान के जनजाति और ग्रामीण अंचलों में मानवशास्त्रीय अवधारणात्मक विश्लेषण के आधार पर सांस्कृतिक आधारों को अच्छी तरह से समझा जा सकता है। संभव है कि प्रस्तुत अवधारणाओं के संदर्भ दूसरी संस्कृतियों के साथ जुड़े हुए हैं, पर सांस्कृतिक विशेषताओं की समझ में ये सहायक हो सकते है।

References

Chundawat, Lakshmi kumari. (1975). *Cultural Rajasthan*, Jaipur: Munikh.

Dalal k. Ajit .(2000). Folk wisdom and traditional healing practices: some Lessons for modern Psychotherapies. Published in *Foundation of Psychology*, New Dehli.

Durkheim, Emile.(1915). *The Elementary Forms of Religious life*, Landon: George Allen & Unwin.

Frazer, Sir James G. (1910). *Totemism and Exogemy*, New York: The Macmillan.

Hasnain, N. (2016) . *Indian Anthropology*, New Delhi: Palak.

Huetsan S.R.,(2000). The rave: Spiritual healing in modern sub-culture. *Anthropological Quarterly* George Washington University Institute for Ethnographic Research

Laderman, Carol and Roseman, Marina (2016). *The Performance of Healing*. New York: Routledge.

Singer, Milter. (1975). *Traditional India : Structure & Change*, Jaipur: Rawat.

Somani, D.K. (1985).Bhopa in K.S. Singh. *People of India. Vol. I* Mumbai: Prograssive.

Tabethan Mark, Glenis, lvons, Andonia, c. (2010). Social science/ Medicine Journal "mari healers' views on wellbeing: The importance of mind body ,spirit, family and land. Mind-body,sprit, Holistic, Mari healing, spiritiuality, indigenons, Aotearoa/ Newzealand, zwellbeing.

Tylor, Edward. 1920 [1871]. *Primitive Culture*. New York: J. P. Putnam's Sons. 16.

Tabuti, J.R.S., Dhillion, S.S., Lye, K.A., (2003a). Traditional medicine in Bulamogi county, Uganda: its practitioners, users and viability. *Journal of Ethnopharmacology* 85.Published from Oslo, Narway.

Upaddhaya V.S. Pande. G. (1993). *History of Anthropological Thought, Concept*, New Delhi: Publishing Company.

डॉ. राजू सिंह, सहायक आचार्य, समाजशास्त्र विभाग, मोहनलाल सुखड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर